एक मुट्ठी धूप

(व्यंग्य कविताए)

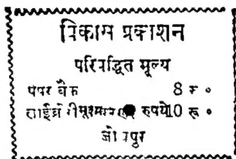
बी० आर० प्रजापति

विकास प्रकाशन, जोधपुर

एक मुट्ठी धूप
(व्यंग्य कविताएं)

Ek Mutthi Dhoop
(Satirical Poems)

प्रथम संस्करण १९७८



प्रकाशक
विकास प्रकाशन जोधपुर (राजस्थान)

प्राप्ति स्थान
बी० आर० प्रजापति
तृतीय एच० ४
विश्वविद्यालय कालोनी
जोधपुर (राजस्थान)

आवरण आर्टस सेंटर, जोधपुर

मुद्रक
जोधपुर विश्वविद्यालय प्रेस
जोधपुर



स्व० श्री तेजमलजी प्रजापति

समर्पण

पूज्य पिताश्री को
जो
जीवन भर
जूझते रहे—अंधेरे से
पर
झुके नहीं—
कभी भी

सांध्य बेला

खिलता है गुलाब
कुम्हलाता है
खिलता है गुलाब
सूख जाता है—बेजान
लेकिन
उसकी खुशबू भर जाती है—
कारागार में
और
बंदी का गुस्सा जगाती है।

—हो ची मिन्ह

अपनी बात

मेरी इन कविताओ पर कविता ही न होने का आरोप लगाये जाने की सभावना है क्योंकि ये दो टूक भाषा म, अंधेरे की आड म छुपे हुए उन ठगो पर 'एक मुट्ठी धूप' फेंकती हैं जो आधी शताब्दी स हमारे देश का ही नहीं, दुनिया भर का गला दबोचने का षडयत्र रचते रहे हैं ।

बेशक ! मेरी ये कविताए गाव की औरत की तरह फूहड व अश्लीलात्मक हो सकती हैं तीव्र ध्वनि की तरह असुहावनी हो सकती है और सीधी घाटी की तरह सपाट और बडबोली भी हो सकती ह, पर मुझे अपना प्रयास सार्थक लगेगा यदि मेरी ये अ-कविताए अँधेरे की गोद म घुटते या खर्राटे भर रहे अपने बेखबर दोस्तो को, घुटन भरी, गहन कलाओ की करवटें बदलते अपने बेचैन दोस्तो को अपनी ध्वनि-तीव्रता स कचोट कर कम से कम एक मुट्ठी यथार्थ चेतना दे सकें ।

अँधेरे की आड म साठ करोड लोगो पर खूनी आक्रमण को उद्यत मुट्ठी भर ठगो पर यदि मेरी एक मुट्ठी धूप की एक किरण भी पड सकी तो मैं अपना यत्न सार्थक समझूगा ।

—बी० आर० प्रजापति

तृतीय एच ४
विश्वविद्यालय कॉलोनी
जोधपुर (राजस्थान)
फरवरी १६७८ की
एक नाराज रात

क्रम

कविता

कविता—
शब्दों का हथियार है
जो आदमी के अंदर तक
वार करता है
और उसे लहूलुहान कर देता है।

कविता—
छोटे चाकू की तेज धार है
जिससे हम
पुनरानुभूति के
खट्टे-मीठे फलों के कठोर छिलके
छीलते हैं
फल गटक जाते हैं
और तृप्ति का आनन्द मनाते हैं।

कविता—
अनाम फूलों का गुच्छा है

जिसमे से
फूटती है तरह तरह की
सुगध
अभिभूत करती हुई,
हम महसूस करते हैं
और
आख मीचे हुए भी
जूही, मधुमालती चमेली
चपा, रातरानी या
फिर जगली फूलो की सोंधी महक
आदि मे विश्लेषित करते है।

कविता—
धुन है सगीत की
जो रुन झुन रुन-झुन
नचाती है हृतरगो को
और हम—
रागो मे नामित कर
उसे विभाजित करना चाहते है।

कविता—
पूरे मुख पर लरजती, खिचती
मुग्ध भाव, दर्द या कि
खिचाव की एक रेख है
जिसे हम
साफ तौर पर पहचान सकते है।

कविता—
स्वादो मे बटी हुई कडुवी, खट्टी
मीठी या नमकीन चीज है।

कविता—
तकिया है रेशमी रुई का
जिससे हम अपने आप को

सहलाते हैं,
गुन्गुदाते हैं !

कविता—
हो हो करती मजाक भी है !

कविता—
बंद कमरे की सजा है,
उमस है घुटन है
जिससे हम
बेचैन हो उठते हैं !

कविता—
बातों से गुथा हुआ
एक हथौड़ा है
जिससे हम कई चीजें
ठोकते पीटते हैं
तोड़ भी सकते हैं !

वाह !
क्या क्या है कविता ?
वह तो एक सरिता है—
जिसमें
हर बुद्धिजीवी नहाता है
हगता, मूतता भी है
कूड़ा बहाता है
कला के नाम पर—
मोटरों के बल से
उसमें भवर बनाता है
खुद भी डूबता है
औरों को भी
डुबोता है !!

वाह !
क्या क्या है कविता ?

चकमा

डुगडुगी बजा दो
मजमा जमा दो
झाड दो—
जोरदार भाषण
बेच दो—
भीड को फिर चकमा देकर
दो टके की पुडिया
दो रुपयों मे !

निकाल लो कोई भी मत्र
फूक दो—भीड पर
गले मे जन-तत्र के
बाध दो
कोई भी
(सोने चादी, ताबे अल्मूनियम का) जत्र !
अबूझ
इस भोली सी जनता को ठगने का
मौका यह अलभ्य है !

इसीलिये कहता हूँ—
उठाओ डुगडुगी—बजा दो
मजमा जमा दो—फिर
चकमा चला दो—फिर
तमगा लगा लो—फिर
जनता की सेवा का !

बातो ही बातो मे
सब गडबडी मिटा दो
घिस दो चिराग—
झट गरीबी हटा दो !

किसको क्या कहें ?

किसको
क्या कहें ?

जब नाग नास पर
बैठे उल्लू
पात-पात पर लिपटे बैठे—
अनगिन चींटे,
तने जड़ों के कण कण पर हैं—
दीमकों के झुंड
पड़े रुंड मुंड
पाखंडी
मुंड मुसंड—
तिलक, टोपी धारे।

अजगर—पूँछ पसारे
निगल रहे हैं सब कुछ
चूहों के
कुनबे के कुनबे
कुतर रहे हैं चुप चुप—
कुट-कुट, कुट कुट कुट कुट।

जब सफेद मछलियों ने
काला कर दिया—सारा कुंड।
तब—
किसको क्या कहें ? •

[मूल राजस्थानी]

बुझती आँखें

'वह रहा पानी, वह रहा पानी —
उन अधमरे प्यासों से
अंगुलि से पानी दिखाकर दौड़ा कर
वे सारे ठग
उनकी गठरियाँ लूट उठाकर चलते बने !

आओ लो खाओ
बैठो लो खाओ
कहते कहते—उन ठगों ने
सब मरभुखों के सामने
पत्तलें बिछायीं, दोने सजाए
वे बेचारे बैठे ताकते रहे
और पीछे से चुपचाप
उनके कटोरे, डोले उठा कर
वे सब ठग
एक एक करके रफ़ूचक्कर हो गये !

मेरे दोस्त !
ये सब गिद्ध जो तुम देख रहे हो
तुम्हारी लाश के लिये मंडरा रहे हैं !
खून की जो लकीरें, बूंदें
तुम्हारे पीछे छूटती जा रही है—
वे तुम्हारी हैं !

तुम समझ ही न सके
और यह पूरा का पूरा देश
एक मिले-जुले षडयंत्र के सहारे
एक भयानक, अकाल ग्रस्त, लिजलिजी
चीज हो गई है
और तुम-हम सब
अत्यन्त बचे खुचे, छिछले, गंदले पानी में
तड़पती, दम तोड़ती—
पचास करोड़ मछलियां !

मेरे दोस्त !
मैं इन आंखों का क्या करूं ?
जो मेरी हथेलियों पर
गहरे अंधेरे गढ़ों में
पारे की तरह तड़पती हुई
चमकती तो हैं
पर कुछ नहीं देखती !
लगातार धोखे से शायद ये
बुझने लगी हैं !
पर मेरे मन में
जाग रहा है
अब भी एक भरोसा—
राख के नीचे
अंगारे की तरह सुलगता हुआ
चुपचाप ! •

[मूल राजस्थानी]

खूखार रात

हवा के हर टुकडे मे
पसरती यह—
खून और मरे हुए आदमी की बदबू,
सारी सुगधित परतो को तोडती
मुझे—
उबकाई आती है !

पचास कराड चीखे
मेरी हड्डियो तक चुभती हैं—जोरदार
हर खिडकी के सामन
डरावने स्वर मे
बोलता है—उल्लू,
चारो ग्रार मौत का सन्नाटा
पाच चार सुग्ररा से डरा हुग्रा—
सुनसान
यह पूरा शहर !

इस खूखार रात मे
मुझे कत्तई नीद नही आती
मैं मरी आत्मा का
बडबडाना सुनता हूँ
मेरी मुट्ठिया म
भरन लगती है—
आग ! आग !! आग !!!

[मूल राजस

दर्पण

दर्पण—कई तरह के होते हैं।
दर्शन भी कई तरह के होते हैं।
दर्पण—कानकेव कॉन्वेक्स, स्फीरिकल पराबालिक,
चश्मे के काँच—

इससे भी ज्यादा तरह के,
जिनसे वे दिखा सकते हैं आपको
एक नकल—पचास तरह की।
पर नकलें
सब में बदली हुई होती हैं
दिखावटी खूबसूरत
असल में भोंडी।

मैं एक सादा दर्पण रखता हूँ
एक सादा सच्चा काँच।
पचास कराह ठठरियाँ
यदि रोटी के लिए
बदहवास हों
सर्दी में ठिठुरे
चूल्हे के पास रख
डिब्बे बजाती हों
और उदास हों।
तो क्या
कुछ लाख सादे देखकर
आप खुश होओगे? हँसोगे?
होओ तो होओ
हँसो तो हँसो
पर अपने आप को धोखा दोगे भाई।
चन्द दिनों में
खुद भी ठठरी होओगे
और फिर रोओगे।

लो देखो—
अपनी सादा नकल
मैं—
एक सादा सच्चा दर्पण रखता हूँ।
एक सादा सच्चा दर्शन रखता हूँ।।

साप की लकीर

अब हुआ यह है कि
तुम, हम सब
बेवकूफ बने हुए
खोज रहे है कि
कहा से शुरु हुई थी यह दीमक ?
अनदीखी, गहरी
कहाँ कहाँ से खोखली हागई है
हमारी जमीन ?
जगह जगह से तडकती दीवारें
कलजे म कपकपी उठाता हुआ एक डर !

तुम हम सब
थक हुए सपना म भ्रमित
चैन की नीद सो रहे थे !
वह पीणा-साप
पूर घर म घूमता हुआ
हमार नरीर को गुदगुदाता हुआ
हमे सू घ गया !

हमारे खैरख्वाह कुछ लोग
अब लकडी लकर
दौड रहे है
और पीट रहे ह
साप की लकीर ! •

[मूल राजस्थानी]

आदमी बनाम भेड

म एक सवाल फकता हूँ मेरे भाई !
रक्खा दिल पर हाथ
और जवाब दो—
आप आदमी ह या कि भेड ?

केवल खुद की घास के लिय मिमियाना
और डड के बल हाके जाना
क्या तुम्हारी नियति नही है ?
यदि है—ता जाओ
आखें मीचे, सिर किये नीचे—जाओ
खड्डे म गिरो
टागे तुडवाओ
मिमियाओ घिघियाओ
खाल उधडवाओ
बोटिया कटवाओ !

यदि नही है तो आओ
कधे से कधा जोडो
पहाड उठाओ
चिनगी स चिनगी जोडो
आग लगाओ
लाहा साना सभी तपाओ
कुछ बनाओ !

मैं एव सवाल फकता हूँ मेर भाई !
रक्खा दिल पर हाथ
और जवाब दा—
आप आदमी है या कि भेड ?

जनता का आदमी

एक काम कर मेरे भाई।
हवा में उछाल—
कुछ रंग रंगीले गुब्बारे
गैस से भरे हुए,
आकाश में छोड़
कोई जोरदार आतिशबाजी
इकट्ठी हुई भीड़ में
बांट कुछ रसगुल्ले
और फिर
जोर जोर से रो—
गरीबी के नाम पर।

मैं ठीक कहता हूँ
चमत्कार के अलावा
रास्ता नहीं है कोई
प्रसिद्धि पाने का।

कोई साधू बाबा हो
या हो नेता नुमा
जनता के समक्ष सब
पोस्टर वत प्रगटते हैं।

तुमको भी होना हो—अगर
जनता का आदमी
तो जनता को खाओ।
जनता को पीओ।।
जनता को ओढ़ो।।।
और—
जनता की भाषा में
कुछ लतीफे छोड़ो।

•

[मूल राजस्थानी]

गरीब की जय

'गरीब की जय '
'गरीब की जय ।
तीव्र रव म
जय जयकार सुनते ही

गरीब की आँखें चमकने लगीं,
उसने—
अपनी फटी कमीज
खोलकर फेंक दी
पोखर के पानी से
अपना मुँह धोया
अपने ऊबड़ खाबड़ बालों में
अंगुलियों को कंघी की माफिक
फिराने लगा
और राष्ट्रीय धुन सुनने की मुद्रा में
तन कर खड़ा हो गया।

वे सब
'गरीब की जय' लिखे हुए
झंडे लिये
'जय जय " बोलते हुए
उसके पास से होकर
निकल गये,
वह बुत की तरह खड़ा रहा
और जब सब
'जय जय करते
निकल गये
तो उसने अपना सिर पीट लिया।

गरीब की जय का
धीमा पड़ता सुर
उसे अभी भी
सुनाई दे रहा था। •

[मूल राजस्थानी]

आदमी के इतिहास से लगाकर
उसके भूगोल तक के
जन्मदाता निर्माता
होते हैं कुछ सूत्र।

शासन चलाने से लेकर
गाड़ी चलाने तक के भी
होते हैं—कुछ सूत्र
और सारी कठपुतलियाँ
मनचाही चलाने के भी
होते हैं—कुछ सूत्र।

और तो और
बकरिया चराने से लेकर
आदमी चराने तक की विद्या के भी
होते हैं—कुछ सूत्र।।
मेरे दोस्त!
तुम शायद इन सूत्रों की महिमा से
अपरिचित हो।

उनके या हमारे घाटा जाने
या चैन की नींद सोने की तह में भी
हैं—केवल कुछ सूत्र
और आदमी के सारे दुखों के
जन्मदाता भी हैं—केवल कुछ सूत्र!

मेरी इल्तजा है
कि तुम सूत्रों की भाषा समझो मेरे दोस्त!
सूत्रों में उलझो मत
सूत्रों को खोलो
सूत्रों की तह तक पहुँचो मेरे दोस्त!!

पैंदे मे छेद

यह आदमी
बिल्कुल भूखा है
और ऐसे ही
न जाने कितने
बेहिसाब लोग !

मौत—
छिपकली की तरह
उन पर नजर गडाये
बैठी है !

वह आदमी
छत्तीस व्यजन खाकर
अफरा रहा है
डकार लाने के लिये
चूरन फाकता है !

एक आदमी और है—
जो
भूख लगने पर
खा लेता है
फोपता, कचौडी या
कुछ भी !
क्योंकि उसके पास
कुछ चवन्नियां हैं,

व्यंजन के लिए
वह—
रात दिन टापता है
सपन देखता—
मागता है मागता है
मागता है ।

मैं हैरान हूँ
मेरे इस देश में
भूख अजीर्ण
हकीकत और सपने के बीच
कोई फर्क नहीं करता
न कोई
किसी तरह का
सवाल पूछता है ।

और कुछ लोग
पिछले तीस बरसों से
अभी तक
पानी पर पद चिन्ह
तलाश रहे हैं ।

बस हर तरह का सवाल
लोक सभा में पेश होता है
तैरता भी है
पर
पेंदे में छेद हो जाने से
धीमे धीमे
धीमे धीमे
वहीं पर गर्क हो जाता है ।

आइए जनता को हाथ जोडे !

आइए—हम जनता को हाथ जोड़ें !
दूर से कंकर मार कर
मटकिया फोड़ें
और प्यासो को
पानी पीने का कहें !

कही—
मटकियाँ खाली तो नही है ?
हो तो—
कुँए का पानी ऊपर लाने का
कंकर पत्थर जोड़ें
आइए—हम जनता को हाथ जोड !

आज बात क्या है ?
मुगिया चोंचें मार रही
बिल्ली को,
बकरिया शेर की
पूछ पकड कर खीच रही है,
भेडिया ममने के सामने
गिडगिडा रहा है
साप मेंढको से
भीख माग रहा है
सारे कबूतर इकट्ठे होकर
कुत्तो को खा रहे है !

आज कुछ न कुछ गड़बड़ है
कुछ न कुछ खाना है
या फिर
चुनाव का मौसम आने वाला है !

हम जब हर जगह
भेड़ों के खाल मिल जाते हैं
सारे नकली नोट
सरपट चल जाते हैं
चमकीली बातों पर ही
वोट मिल जाते हैं
तो फिर
क्यों न हम हँस कर दौड़ें
आइए— हम जनता का हाथ जोड़ें !

हम सूरज के गोले को
उठा कर फेंक देंगे
(या फेंकने का कहेंगे)
तुम पतले से धागे से
हम बांध देना !
आओ हम चमत्कार वाला
नाटक खेलें
हाथी से बाध कर
गरीब चिड़िया का घोंसला ठेलें !
आओ हम
तूफान से आंख मिचौनी खेलें
तरह-तरह के गाल बदलें
और रंग रंगीले पापड़ बेलें !
जब तक मिल जाती है
झूठ और पाखंड से—
गुदगुदी गद्दी का मोह क्यों छोड़ें ?
आइए—हम जनता को हाथ जोड़ें !

[मूल राजस्थानी]

मेहनत और घीसू

घीसू कुम्हार
झीर झीर धोती पहन
उघाडे-तन मिट्टी गूघता है,
उसकी औरत 'दुखिया
हसिये स काटती है प्याज
डबर स मिर्चें ढूढकर
चटनी बाटती है
और ठीकर म रखे हुए
बाजरी के बासी टुकडा का
गिनती है बार बार।

उसका लडका घूलिया'
मटका पहुँचाने गया है
लछमीचन्द सेठ के यहा
माखरराम सरपच के यहाँ।
छोटी लडकी माखूडी
नाक पर बैठनी मक्खिया उडाती है
और झोली म टाग कुदाता छोटू
कटोरी भर दूध के लिये
चिल्लाता है तडफडाता है।

उदास घीसू आज
खुश होता हुआ
बर्तन पकाने के अलाव पर
जुटाता है उपले, फूस और भूरा
आज अलाव पकेगा
कल आयेगा लछमीचन्द
बहीखाता लेकर

ब्याज लेने के लिए
और अंगूठा चिपवाकर
वापस चला जायगा।

मास्टरराम सरपंच
राम राम करता आयगा
अपने ट्रैक्टर का भाड़ा
याद दिलायगा
और इक्की दुक्की बिरत ले जायगा।

घीसू फिर गाली और
उदास हो जायगा
बाजरा और प्याज
फिर उधार ले आयेगा
सेठ के यहाँ से।

हरएक घीसू
मेरे देश का गाँव है
और शहर की गली
लछमीचन्द मास्टरराम
मेरे देश के 'सेक्टर'।

कितने करोड़ छोटू'
कटोरी भर दूध के लिये
चिल्लाते तड़फड़ाते हैं
पर कहीं कुछ नहीं होता,
कुछ नहीं होता।

उल्टे सरपंच
आकर कहता है—
कुछ और मेहनत करो घीसू!
मेहनत जीवन का सार है घीसू!!
कुछ और मटके घड़ो घीसू!
मटके तुम्हारा सिंगार है घीसू!! • [मूल राजस्थान

एक मुट्ठी धूप की आवाज

मैं थूकता हूँ—
उन टोपियों पर
जो बाहर से अलग
और अन्दर से बिल्कुल दूसरे रंगों की हैं।

मैं थूकता हूँ—
उन दीवारों पर
जिन पर चन्द दिनों के बाद ही
एक नया और ज्यादा झूठा पोस्टर चिपक जाता है।

मैं थूकता हूँ
उस पूरे कारखाने पर
जिसका अखबारों में तो बहुत नाम है
पर जिसकी चिमनी से

कभी धुआँ तक नहीं निकलता,
और सारी मशीनों के पास
लोग उघाड़े होकर,
थोड़ा बहुत कीटा चुपड़कर
तरह-तरह के योगासन करते हैं
और मशीनें एकदम चुप !

मैं थूकता हूँ—
उन चंदन कुंकुम तिलकधारियों पर
जो ढोल जैसी तोंद लिये हुए
अपने मुहल्ले से बाहर
आम सड़क पर खड़े होकर
गरीब आदमी का नाम लेकर
उसके दर्द को न देख सकने का नाटक करते हुए
'राम-राम' करते हैं,
और कमरा बंद करने के बाद
वहीं 'गरीब' की बोटियाँ काटकर
कच्चा ही खा जाते हैं !

मैं थूकता हूँ—
उन भेड़ों के झुंडों पर
जो चंद साल
मलीदा खाने पर इतराते हैं
और फिर चुपचाप
सारी भेड़ों की अगुवाई करते हुए
बूचड़खाने की फाटक में घुस जाते हैं !

मैं उस अंधकार पर थूकता हूँ
जिसने सारी आँखों पर काला पर्दा पटक दिया है,
और
आवाज देता हूँ आज—
एक मुट्ठी धूप को
जो जरूर सारे छद्म उघाड़ेगी—एक दिन !

तुम्हे सौगन्ध मेरी !

अगर कुछ दिन
कटका की राह मिल जाय
दु खा की चोट
चारो ओर से पडने लगे,
सारे रेशमी अहसास
जलकर राख हो जायें
तब भी ओ प्रिय !
तुम धैय न खोना
तुम्ह सौगन्ध मरी
क्योंकि—
कटककीण जीवन ही
ज्योति पथ को सुझाता है !

अगर कातिल अधेरा
घेर ले चारा दिशा स,
अगर बिजली

टूट पड़ने को बढ़ती हो,
अगर आँधी चीखती हो
गा जान का
तब भी ओ प्रिय !
न संतुलन खोना
तुम्हें सौगन्ध मेरी
क्योंकि कोई भी अँधेरी रात
सूरज को न मिटा पाई !
अगर कुछ दिन
बन्द हो जायँ
भौंर की गुंजार
औ अँधेरा डराये
कम्पित स्वरों में,
अगर कुछ दिन
खिलने बन्द हो जायें
गुलाबी पुष्प
और वसमसान लगे
रक्त रंजित दर्द
अगर कुछ दिन
मधुर गीतों की ध्वनियाँ
रुद्ध हो जायें
और गूंज
मृत्यु का ही क्रुद्ध स्वर !
तब भी ओ प्रिये !
तुम भयाकुल हो
पीत मत होना
तुम्हें सौगन्ध मेरी
क्योंकि हर बलिदान में
शत शत नये जीवन खिले हैं !
तुम्हें सौगन्ध मेरी
ओ प्रिय !

मरूंगा नहीं—हर्गिज !

तुम
करलो करोड़ों टी एन टी विस्फोट
मैं—मरूँगा नहीं हर्गिज !
धुँआ खत्म होने पर
फिर आऊँगा नज़र
'यहां हूँ—यहां हूँ करता !

मेनिया तुम्हें हुआ है
लाख बार धोआ हाथ
खून के लोथड़ तुम्हारे अन्तःस्तल में जमे हैं।

हर युद्ध के बाद
मैं चीखता हूँ कि मैं मरा नहीं
तुम फिर डर जाते हो
और अपने सींगों को फिर खुजलाने लगते हो,

आग से
फिर लबलबा आती है तुम्हारी आँखें !
थामे हुए—नजर कम टक
मर-खप गये
चंगेज, हिटलर, कई
पर
मैं कहाँ मरा ?
हानोई हो या मोजम्बिक
नाचेगा कब तक रीछ ?
तुम
लाख विस्फोटित करो सूर्य
माइ ली का
सूखेगा नहीं खून
और
बार बार अंकुरित होऊँगा मैं !

आँखें किसी आइ ए की
नहीं देख सकेंगी मुझे
मैं अदृश्य हवा म उडता रहूँगा—
हर-दम
और हर युद्ध के बाद
चीखूगा—
कि मैं मरा नहीं
धुँआ खत्म होने पर
फिर आऊगा नजर
भूत की तरह
यहाँ हूँ—यहा हूँ करता !

तुम
करलो करोडा टी एन टी विस्फोट
अनगिनत हत्याएँ
मैं मरूँगा नहीं हर्गिज !

•

चमडी का रग

`

एक पीढी पैदा हो गई
एक हो गई जवान
हाथ म लिये—
पत्थर छुरा या अग्नि बान !



क्या याद नही है ?
वे जो जुलूम के जुलूस
गालियां खाते थे—वे क्या थे ?

कल ही तो
हमने कुछ को बांटे हैं ताम्र पत्र
रंग जमाने के लिये !

फिर फुसफुसाए महामंत्री
वह जो नंग धड़ंग, कटूटी पीढी थी—जंगल की
उसने भी
नहा लिया है—सुगंधित साबुन से
इत्र फुलैल की गंध उसे भी—
लुभा गई है
चखनी आइसक्रीम
पीलिये कोल्डिक उसने भी,
'कवरें' की खबर—
उसे भी हो गई है
गुदगुदा गई है देखकर गुदगुदे गद्दों को !
कच्ची सड़क जो
हमने बनवाई थी
भागी आरही है वह पीटी भीड़ बनी—
उसको रौंदती
कितनी खतरनाक !

हो जाओ होशियार
टोपी कपडा बदलने से
होगा कुछ नही
उघड़ेगा धोखा—बत्तीस बरस का
बदला फटाफट—
रंग चमडी का—
भागो भागो !! •

एक समझाइशी बात

तू कवि है
थोडा धीरज धर
इतना मत छटपटा मेरे भाई !
यह जो दर्द है
वह चारो ओर से बँधा हुआ है
और तभी जायगा—जब फटेगा,
सब पहाड टूट कर हो जायेंगे समतल !
भयानक ब्लास्टिंग चल रहे हैं
और बुलडोजर भारी भरकम
गड गड की आवाज करते—
घूम रहे हैं
थोडा धीरज धर मेरे भाई !

अभी तो सूरज
कांगो के बीहड जंगलो मे
भीमकाय फूहड दरख्तो की शाखाओ के बीच—
अटका हुआ है
और हब्शी
डर कर इधर से उधर भाग रहे हैं
कि यह कैसे हो गया ?
हो सकता है कि
बूढा जंगली अजगर
पश्चिम या पूरब की दिशा से
सरकता हुआ आया—चुपचाप
और

सूरज को पूरा का पूरा निगल जाये
तथा हल्दी
फिर अंधी गुफा मे घुस जायें ।
पर तुमने तो
दिन का चौंधियाता उजाला भी देखा है
और सूना, सूसाट घोघड अँधियारा भी ।
फिर
हर जुलूस म शामिल होकर
मुर्दाबाद के नारे क्या लगाते हो ?
जिनके लिये तुम
अजब गजब आवाज म टरटराते हो
व भो भेडें नही हैं
जो सिर नीचा किये
सीधी बूचड-खाने चली जायेंगी ।
देखो ।
जगह जगह फव्वारे लगाकर
हरियाली उगाई जा रही है
टकिया का पानी
खतम हो जायगा तब देखा जायगा ।
पर तब
भेडें भी भेष बदल कर—
भेडिया हो जायेंगी
और उनपर काबू पाना हो जायगा मुश्किल ।
मेरी बात मान
और थोडा धीरज धर ।
तेरा दर्द सीमाओं म बधा हुआ है—तू कवि है ।
यह जो जोरदार पोस्टर चिपका हुआ है
उसपर
दिन-ब दिन दूसरे और जोरदार पोस्टर—
चिपक जायेंगे
तू—थोडा धीरज धर मेरे भाई ।

अकाल मृत्यु

मा के आस पास
मण्डराती
भूख पीडित
बालक की आखा जसे
अनगिनत मन
अ धकार म टकराते
उडत हैं
चाद की किरना का
महारा पाने
जा न जाने
किस िशा मे उगेगा ?
और
दिशा ज्ञान न होने पर
सडक पर दौडत
बच्चे की तरह
दुघटनाग्रस्त होकर
कुचल जात हैं ।

इधर देखो तो सही

इधर देखो तो सही भाई !
चीखते हैं—
अनगिनत बच्चे
दूध को, रोटी को !

इधर देखो तो सही—
ललचाते हैं
अनगिनत बच्चे
कुल्फी को खिलौना को
रंगीन कुर्ते को फ्रॉक को !

कचरे से चीजें कुड़बीनते—बच्चों को
भूठे बरतन मांजते, धोते—बच्चों को
पालिश करते पैसे मांगते—बच्चों को
स्कूल के सामने मायूस होते—बच्चों को
बकरियां चराते, गोबर बीनते—बच्चों को
रिरियाते, मन को मसोसते—बच्चों को
आंखों में आंसू उलीचते—बच्चों को ।

इधर देखो तो सही माई—
धूप की आग में उघाड़े तपते—बच्चों को
ठिठुरन से सिकुड़ते, थर थर कांपते—बच्चों को ।

देखो तो सही—बीमार कुम्हलाते—बच्चों को
देखो तो सही—भूख से मां मां चिल्लाते—बच्चों को !

और उधर देखो तो सही—
कार की बारी से भांकते
या मक्खन रोटी चाटते—कुत्तों के बच्चों को !
मखमली कालीन पर सोते
या दूध दही गटकाते—बिल्ली के बच्चों को !

बच्चे बच्चे को
अपना बच्चा करके देखो तो सही
पूरा क्षितिज तुम्हारे सामने है
आंखें खोल कर देखो तो सही ।

और अब इधर देखो तो सही—
कारों पर—कीचड़ उछालते बच्चों को
मुट्ठी में पत्थर भेजते—बच्चों को
आंखों में लाल आग सुलगाते—बच्चों को
दांत भींचते, मुट्ठियां तानते—बच्चों को !

जरा इधर देखो तो सही मेरे माई !!

चेतना

मेरे चौतरफ
चिंघाड़ती है—एक ग्रावाज
ग्रौर जलती है
धधकती हुई

नापाम बम की सी—एक आग !
तुम
मत आना पास
कीच भरे गूड आँचल हो तुम !

थर्रा कर फटेंगे कान
उड़ जायेगी
राख परतों की चिन्दियाँ
मिट जायेंगे निशान तक,
मैं
विनाशकारी—छूटा हुआ
अणु आयुध हूँ
और तुम
आदिम युग के आदमखोर
पत्थर का हथियार थाम !

मैं बूँद बूँद से जुड़ा हूँ
पर हूँ
तूफानी समुद्र
तुम
निरे बाज-पक्षी दुष्ट !
मत फड़फड़ाना पंख

नाहक तुमने रोका है पथ
नाहक दे रहे गालियाँ
प्रलयकारी भूकम्प हूँ—मैं
नाहक बन रहे दीवार
स्नफासमन्ट का दम लिये

फिर कहता हूँ—
मत मरो व्यर्थ
या न दर्मो
दुष्ट पाश्मरार !

सूना पतझर

सनसनाट करती हवा का
कांपता संगीत
थरथराते डील से
'क्वरे' करती हुई सी
वृक्ष शाखें,
एक एक कर
क्षीण पत्तों के
वसन को फेंकती—
नग्न होती,
चमचमाती धूप किरणों से
लिपटती,
सांय सांय
और फिर सन्नाटा
बस !
कक्टसा के चन्द जाड़े
हिप्पियों से—
पिनक पूरित
खड़े हैं चुपचाप !
लगता है—
इस नग्न दुनिया से दुखी हो
यह शहर सूना
मार्लिन मुनरो की तरह
कहीं बहुत सी
नींद गोलियां खा लेगा !
या 'हाराकीरी' कर लेगा !!
कहीं तो कोपलें फूटें
तो कोयल कूक उठे रे !

•

डर—उगता हुआ

उस दिन
उस घुटनभरी
घुप अँधेरी रात में
जब फिर जला
नारे का यह दिया—भरम भरा
गरीबी के नाम का धुँआ छोड़ता—
हो-हल्ला मचाता हुआ
समाजवाद की चीख छोड़ता
तो मैं डरा—
कहीं सब आग लग जायगी—तो ?

यों तो हर शाम
निचुड़ा हुआ तेल
बस ही चुक जाता है
इतना रहता ही कहा है
कि दिया जले ।
अँधेरे की फाटकें
अपने आप हो जाती है बद
और अपने आप खुलती ह—
जब कि
कौओ के झुड को दीखती है लाश ।

इसीलिय
उस घुटनभरी
घुप अधेरी रात मे
जब फिर जला—वही दिया
भरम भरा
तो मैं डरा—
कही अब आग लग जायेगी तो ?

(२)

एक खूसट ने आकर
मुझे धीरे से कहा—
भाई जमाना बड़ा खराब है
पहले क्या था,
अब क्या हो गया है ?
मैंने पूछा—
क्या और कसे हुआ है ?
तो वह—
चुप और उदास हो गया ।

तब म बोलने लगा—
सुबह होते ही हम अपना लहू भुनाकर

रोटियां खोजते हैं
खोजते रहते हैं, और खोजते रहते हैं।

वे सब मकड़ीनुमा लोग
लहू तो भुना लेते हैं
पर रोटियां छुपा देते हैं।

हम सब
आपस में लहूलुहान होकर
लुढ़क जाते हैं।

पहले भी हम यही करते थे
राम और श्याम भजते थे
और भूलभुलैया वाली अंधी गलियों में
भटकते थे।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' का
यह मतलब हर्गिज नहीं है
कि धान हम बोयें
और कोठे कोई और भरले
लहू हम भुनायें
और मोटा कोई और हो जाय।
मैं जब यह सब कह रहा था
तो खूसट ने
न जाने क्या मुंह बिचकाया
और चल दिया।

(३)

इस वीरान रात में
मैं अहर्निश
पत्थर की हथेली पर
किरणों की रेखाओं का लेखा जोखा कर रहा हूं।

दूर कहीं कुत्ते
इसलिये नहीं रोते
कि कहीं कोई मर गया है
बल्कि इसलिये
कि कोई मरे और हड्डियां चाटने को मिलें।

कितने करोड़ लोग
अस्थियों पर कोरा चमड़ा चढ़ाये हुए
नाहक जीने का ढोंग कर रहे हैं
गुफाओं में टटोलते हुए
वे हाथ
थर थर करती पिंडलियां
और पसलियों के बीच
कांपती हुई—उबलती हुई
कलेजे की धमनियां।

(४)

ज्यों ज्यों भीड़ बढ़ती है—
बाजीगर चीख चीख कर—
नारा लगाते हैं
और भोले दर्शकों को
कबूतर पकड़ने को दौड़ाते हैं
मानो
वे कोई रेगिस्तान के हिरण हों।

किंतु जब कटी हुई
हताश भीड़ जब क्रुद्ध होकर
लौटती है
तो वे सब मकड़ीनुमा लोग
अपने पंजे समेट कर,
मिट्टी में सिर गड़ाकर
मील के पत्थर हो जाते हैं।

कसाई पत्थर पर
छुरी घिसता है—
और कोठरी मे बंधा बकरा
बिलबिलाता है
घास के बदले मास का भेद
बेपर्दा हो जाता है !

देखो—
ओढने को सिर्फ एक फटी चादर
और पौष की ठिठुरती हुई—यह रात,
सूरज उगने तक
इंतजार करने की यह कैसी मजबूरी है ?

चारो तरफ
इकट्ठा हो गया है फूस ही फूस
और जब-तब
चल जाती हवा !
अनजान मे इकट्ठे हो रहे
आग भडकने के सारे सामान !

इसीलिए तो
एक चौथाई शताब्दी
तीलियाँ घिसने के बाद
उस दिन
उस घुटन भरी
घुप अँधेरी रात मे
तब फिर जला—जोर से
नारा वह दिया—गरम भरा
गरीबी के नाम का धुआं छोड़ता
हो हल्ला मचाता
समाजवाद की चीख छोड़ता
तो मैं डरा—
कहीं सब आग लग जायगी तो !

वह शाम

बेहिसाब आवाजें
घंटियाँ, भोंपू और
घरर घरर र र र !

बिल्ली की तेज आंखों
की तरह
शिकार की खोज में
बुझ बुझ कर जलते—
साइन बोर्ड,
चमकती दुकानें
और चीखते मन
लटपटाती लड़कियाँ
उखड़ते सपने ।

कोल्हू से—
थके मान्दे शरीर
भनभनाते मच्छर सी टीस
बल्ब के चारों ओर

चक्कर काटते पतिंगों के झुण्ड
सा यह दिमाग ।

कारें और कोठियां
साड़ियां सूट जूते
रेफ्रिजरेटर, फ्रूट, मुर्गे और
बोतलें
लिनोलियम डनलप पिल्लो ।

धुएं का कुहासा
गोरे और चिकने
मैले और बदबूदार
अधनंगे शरीरों की भीड़ ।

छटपटाती चिल्लपों
बेतहाशा—
परेशानियां

सपनों का अम्बार
सिनेमा के परदे
सभी कुछ ।

किन्तु फिर भी
सारी मरयम मन
विनमाई ये—
दुखती आँखें—
अनगिनती लोगों
की दुख पीड़ा का
सबब ढूंढती ।

आज
लगता है—
सूरज जल्दी
डूब गया है ।

एक तूफान उठने को

एक तूफान उठने को है ।
मुझे लगता है—
मैं दौडकर आगया हूँ
रेलगाडी के सामने
और कट कर
टुकडे-टुकडे हो गया हूँ
गाढा खून
छितरा कर

थक्कों में जम गया है
पटरी के आस पास ।

एक काला साप
फण उठाये
पीछा करता है मेरा,
मैं
लगातार कोशिश के बावजूद
भाग सकता नही,
मेरे पाव
दलदल में धँसने की तरह
वही वही पडते हैं
और
डसन की पीडा से
मैं गिर पडता हूँ
मर कर !

मुझे लगता है
दीमकें खा गई है मुझे
और मैं हो गया हूँ
खोखला
नितात अर्थहीन !
एक ढपोलशख व्यवस्था
बाधे बास से
हाके जा रही है मुझे
और मैं बन गया हूँ
एक बीमार ढोर
पतला गोबर करता हुआ !
और
भवितव्य में देखता हूँ
भूख
हड्डियों के ढूह ।

एक बाघ
झपटता है मुझपर
खून सने पंजो से
मैं
डर कर जमीन मे
धँस जाता हूँ,
बाघ वह
बिजली सा टूटता है
मेरी झोपडी की तरफ
जिसमे मेरे बच्चे
नीद म सोये हुए ।

अचानक
फिरने लगता है मेरा सिर
एक चीख
जो मेरे खून म बजने लगती है
और
शिराओ तक मे
पैदा कर देती है
एक फडकन ।

मेरी हड्डियो मे
सुलग उठती है—एक आग,
सजायाफ्ता
बेकसूर आदमी के आक्रोश की तरह
मेरे अन्दर
फूटने लगती है एक चीज
जो
दिशाओ मे फल जाती है ।

एक तूफान उठने को है ।

तेजी से

मर नाखून बढ़कर
हो जाते है—
राजरा की तरह
चीर देता हूँ
बाघ का पेट,
ढार स बदल कर
हो जाता हूँ मैं
जगली भसा
आँखों म उठती लाल आग
नथुनों म फुफकारती
झंझाध्वनि,
उतावले खुर-सीग !

टुकडे टुकडे जुड कर
खडा हो जाता हूँ मैं
हरक्यूलस की तरह
हाथो म उठते
शिला खड
कुचले हुए साप फण
दुघटनाग्रस्त ट्रेन
ध्वस्त हो रहे
एअर कडीशड डिब्बे !

लो देखा—
क्षितिज पर छा रही
काली पीली लाल धून
मडराता
चीखता चिल्लाता भागता
फडफडाता चला आरहा
चील झुड
एक तूफान उठन का है !

[मून राजस्थानी]

रूपान्तर

चारो तरफ स
हवा वद कर दी गई है,
एक पत्ता भी नही हिलता,
उमस और
दम घाटू घुटन
सारी चीजें
अथ के कटीले तार लगी
दीवारा म कैद !

हजारा प्रश्न
पागल कुत्ता की तरह
चिचियाते हुए
उन्ह काटने को दौडते है !

मैं हैरान हूँ—
न कोई बचन का भागता है
न कोई दीवार लाघता है
न कोई धारदार हथियार
थामता है !

साठ करोड के
मेरे इस देश म
न जाने कितने आदमी
शापित होकर
पत्थरा मे रूपान्तरित हो गये ह !

दर्द की रात

मेरा देश
दद से कसमसाता हुआ
करवटें बदल रहा है
बेचैन,
व ही कुछ मक्खियां
घावो पर
भिनभिनाती हुई
बैठती है—बार बार
खीझ कर उडाने पर
उड जाती है
पर फिर बैठ जाती हैं
कुछ देर बाद ।
कितनी लम्बी अंधेरी
और दुखदायी है
दद की यह रात ।
कब जन्मेगा वह रक्त पुत्र—
सूरज ? •

लानत

लानत है—
उन आखो पर
जो लगातार देखती ह—
पाशविक अत्याचार
गिरे हुए आदमी पर !

तुकमान गेट, राजन, भूमैया,
वेलछी बडहिया प तनगर, जमशेन्पुर,
भुनगो की तरह
कुचल दिये जात हा आदमी
और पूरा देश दखता हा—
तमाशबीन सा खडा

तब
उन आँखों पर लानत है।
लानत है—
उन कानों पर
जो सुनते रहते हैं
हत्याकाण्ड की हकीकत
तिलस्मी किस्सों की तरह
गोया कोई स्टंट फिल्म दगी हो!

उन कानों पर लानत है
जो दिन के आकाश की
गुंजाती चीखें सुनकर भी
चौकन्ने तक नहीं होते!

लानत है—
उन हाथों पर, पैरों पर
मुट्ठियों पर
जिनको फालिज मार जाता है
एक अनाम भय की आशंका से
जो लगातार
पिटने के आदी हो जाते हैं!

उस मडुए खून पर लानत है
जो पीढ़ियों से
ठंडी नदी की तरह बहता है,
वज्रपात भी
जिसे नहीं देता स्पन्दन तक
ज्वालामुखी की आग भी
जिसे एक उबाल तक
नहीं देती,
ऐसे खून पर लानत है
जो हर्गिज हर्गिज
गरम नहीं होता है!

निरर्थक हँसी

भाई साहब !
आप किस बात पर हँस रहे है ?

आपके सामने
जो नेता, भाषण कर्ता,
दवाई बेचने वाला या बाजीगर
खडा है
या कि कोई कवि या एक्टर
जा भी है !
उनकी भाषा के अर्थ
बिल्कुल उलट पुलट
या दूसरे है !

जसे कि
'प्यारा' का अर्थ 'भोंदुओ
'भाइयो का अर्थ 'गधो
'मिठाई' का अर्थ जहर'
'आदमी' का अर्थ 'कुत्ता'
जनतत्र' का अर्थ 'जड-तत्र'
और 'चुनाव का अर्थ है
'सिर फोडने के लिये
पत्थर चुनाना' !

तव मेरे साहब !
आप किस बात पर हँस रहे ह ?

मरे इस देश म—
भूखा मरन का अथ
तपस्या' है
हसन का अथ 'पागल होना'
और रोना ?
रोना यहा बिल्कुल मना है !
या तो सिफ
मगरमच्छ रो सक्त है
या वो जिनका कि—
प्यार हा गया है !
मसलन कि—
दश स प्यार गरीब स प्यार
सपना की रानी से प्यार
या कि सिफ पैसो से प्यार !
अगर आपका
वाकई प्यार' हो गया है
तो रोने की कोई बन्दिश
यहा नही है !

जब सोन' का अथ हो 'खोना'
नीद' का अथ नाचना हो
'दिन का मतलब हो रात'
और हँसन का अथ हा—
पागल होना
तव मर साहव !
मेरी भाषा क
परिभाषित होन स पहले ही
आप
किस बात पर हम रह है ?

बदलते अर्थ

चीजो के अर्थ
आजकल
बहुत तेजी से बदल जाते है
और इतना तक कि
बिल्कुल उलट जाते है ।

वैसे इतिहास के सिर पर
जूए ढूढे तो
साफ लगता है
कि पहले भी
              ऐसा ही होता था,
पर इतनी तेजी से
पहले नही होता था
अर्थों का बदलना ।

कल तक जो षडयत्री था
वह आज मत्री' हो सकता है
कल तक जो था
'भारत रत्नम' प्रकट
वह आज हो सकता है
पूरा कूडा करकट
कल तक जो 'आदमी' था
वह आज 'गिरगिट' हो सकता है ।

प्यार का अर्थ
अब दुलार' या स्नेह' नही
साफ शब्दो म
रेप' या 'सहवास'
              हो सकता है ।

पहले 'मूल्य' का अर्थ
कुछ और था
और जीवन के मूल्य कुछ न कुछ थे
अब
'मूल्य' बिल्कुल 'निर्मूल' हो गये हैं
और उनकी जगह
उग आया है
सिर्फ एक जादू का डण्डा!
जो जब चाहे—
कुछ भी पैदा कर सकता है!

सात समन्दर पार से
परी बुला सकता है,
दिखा सकता है—सपने में
गड़ा हुआ खजाना
और तो और
वह आपको
सैकिंडों में बना सकता है—
गैंडा, अजगर या उल्लू!

इतनी तेजी से
पहले चीजों के अर्थ
नहीं बदलते थे!

आज मैं 'प्रजापति' हूँ
कल 'कगला' हो सकता हूँ
आज मैं हूँ—
कोठरी एक गंदी सी
कल मैं एक शानदार
कोठी या बंगला हो सकता हूँ

मेरे दोस्त!
शायद तुम भी समझते हो

फिर क्या उलझते हो ?
सारे अर्थ बदलने की
शक्ति है 'अर्थ' में,
आर्थिक सत्ता आज
सर्वशक्तिमान है
ब्रह्म है ज्ञान है
और
राज्य सत्ता की बीजगणित से
उसका मान निकलता है !

आजकल
बहुत घना अंधेरा है
और चीजों के अर्थ
इस झाडी से निकल कर तेजी से—
उस झाडी में छिप जाते हैं !

भाइ ! तुम अपनी
नजर की रोशनी तीव्र रक्खो
अर्थ के छद्म को भाप लो
सब तरफ झाक लो,
झाक लो
अंगूर न मिले तो
चने ही फाक लो !
क्योंकि—अंगूर का अर्थ
अब लोमडी के अंगूर
या 'विटमिन' नहीं
'चना' ही होता है !

आजकल
चीजों के अर्थ तेजी से
बदल ही नहीं जाते
बिल्कुल उलट जाते हैं !

हर रोज

हर रोज
मजबूरी के नाखून
बेरहमी से
उसकी पीठ में गड़ जाते हैं
और दिखावे की

जगमग सफेद कमीज पर
उभर आते है—
खून के दाग ।
हर रोज
सफेद भक्क बगुले
जगह पलट कर खडे हो जाते हैं
आँख मीच कर—
साधु मुद्रा मे ।
भोली मछलिया ठगी जाती हैं
और
निगले जाने के बाद
हत्या का कोई निशान तक
नही छूटता ।
हर रोज
हवा मे एक अजब सा धुआ
भरकर घुटता रहता है,
सबको
अटपटा लगता है
जी फडफडाता है
किन्तु निकलने का
कोई रास्ता नही सूझता ।
फडफडाते पखो को
दबोच कर काबिज हो जाता है
वही हत्यारा बाज—एकार्थी ।
हर रोज
हिरन व गाय के बच्चे
बूचडखाने म लेजाकर
कत्ल किय जाते हैं
खून से लथ-पथ
उनकी चमडी
उतारली जाती है

शानदार बटुए व जूतियां
बनाने के लिये,
और
भेडियों का वंश
पनपता रहता है—बेखौफ !

हर रोज—शाम
अंधकार के आतंक से
उदास हो जाती है
पर आग !
कहीं न कहीं
फिर सुलग उठती है
रास्ता सुझाने के लिये
जो लगातार
सूरज को इंगित करता है !

हर रोज आदमी
आदमियत के साथ
धोखा धडी करता है
पर अंततः
अपने ही हाथों
खुद मारा जाता है !

तभी तो
एक बौना सा वक्त
झाडियों के पास खडा
चुपचाप
मुस्कुराता रहता है—हर रोज
क्यों कि
खूंखार अंधेरे के
परों के आस पास ही
किरण का एक अंकुर
फूटता है—हर रोज ! •

मन करता है

जाने क्या क्या
करने को करता है मन !

इतने गहरे अधकार को
बिजली की रेखाओ सा बस
चीर-चीर कर
आलोकित हा जाने को
करता है मन !

धोखे की मारी दीवारें बाध तोडकर
कल-कल करता
छल छल करता
तजी से बह जाने को
करता है मन !

कितनी तेज, सक्रमण शील
कूडे की दुगन्ध हा रही,
इसके बीच—
अगारे सा चमक ममक कर
ज्वलनशील हा जाने का
करता है मन !

धीमे धीम जग गा रही
गली जा रही
फिर भी मारे अग जकडती—
जजीरा को काट, फककर
इस कारा से—दूर

दूर दौड जाने को
करता है मन !

रोते रात भीज रही
रक्तिम शाखा का,
दिशाहीन हो भटक रही
उन श्लथ पाखा को,
सच का सहलाता सुख देकर
थपथपाने को
करता है मन !

जब से जन्मे,
साने के पिंजर के पाखी
फडफडाते पख बेबस,
नोच नाच पिंजर की खिडकी
तोड फोड अर्थीली बन्दिश
दूर क्षितिज म
सग बयारो के
उड उड जाने का
करता है मन !

कितना प्रेशर
तीव्र घुटन है
कितनी आग कितना दद ?
कितनी गहरी
छटपटाहट ??
विखडन की तीव्र प्रक्रिया
चट्टानो को तोड फाडकर
विस्फोटित हो जाने का
करता है मन
जाने क्या-क्या करने को
करता है मन ? •

निशान

निशान
बहुत अहम् चीज होते हैं।

परों के निशान
पथ भी बताते हैं
और कांटों के जंगल में भी
फंसाते हैं।

अंगुलियों के निशान
चोर या खूनी की
शिनाख्त कराते हैं
पर दास्तानों की बदौलत
वह आदमी
पूरे देश का खून कर देने के बाद भी
रंगीन चश्मा लगाकर
बेखौफ घूमता है—

क्योंकि
निशान न्यायालय के
अहम् सबूत हैं !

खून के निशान
चाट हत्या
माहवारी या प्रसव जैसी
किसी भी चीज का
धोखा पैदा कर सकते हैं !

खोपड़ी का निशान
खतरा भी हो सकता है
और तंत्र का टोटका भी
निशान से
लोक-तंत्र या एक-तंत्र में
भेद करना बड़ा मुश्किल है
क्योंकि
निशान अक्सर
बहुत दोगले होते हैं !

मेरा बस चलता तो
मैं रखता
चुनाव के निशानों में
सब तरह से दबी देखना
यीशु का क्रॉस स्वस्तिक
या कि चाँद
ये सब निशान
गाय बैल हल या हथौड़े
से भी ज्यादा
कारगर सिद्ध हो सकते थे
और भी धारदार हो जाता तब
बजरिये चुनाव—
मनों को हथियाना !

वैसे सत्ता
एक बेनिशान, बेशक्ल
चीज है
जो एक देश की
जमीन व आकाश के बीच
हर जगह हवा की तरह
तैरती, बहती रहती है।

दुख और दर्द के निशान,
प्यार या नफरत के निशान
आपने
चेहरे की सलवटों तक से
उफनते देखे होंगे
पर
धन्य है मेरे देश की जमीन
जो
भूख, प्यास, मौत और
दरिंदगी के
सभी निशानों पर
बिना वक्त लिए
बालू बिछा देती है,
आकाश और सड़क के—
हर हिस्से पर
दोनों ओर
हर वक्त लटके रहते हैं
पांच दस बरस में
गरीबी हटाने के बैनर
और साठ करोड़ आदमी
बारी बारी से
निशानों की धोखा धड़ी का
शिकार होते रहते हैं।

घोडा

हर बार
चावुक सवार के हाथ म
होता है
और घोडा—
मार खाता है !

चाबुक खरीदा हुआ हो
या उधार का
चाबुक बेंत का हो

या डोर, या प्लास्टिक का,
घोडा मार खाता है
फडफडाता है
और भागता है ।
सवार के हाथ म
लगाम होती है
वह उसको
बेदर्दी स खीचता है
नाक फुलाता है
चाबुक मारता है ।

घाडे को दाना
इसलिय दिया जाता है
कि वह अथक भागे
अधिकतम कमाय ।

अश्व शक्ति वाला घोडा
इसलिय मार खाता है
कि उसके मुह म—
लगाम है
और वह समझता नही ।

कभी
घोडा समझ जाता है
हिनहिनाता है
झटके स
लगाम छुडाता है
सरपट भाग कर
लौटता है
और
खुरो के नीचे
सवार का
कुचल डालता है । •

आवाज

अर ओ　　मर भाई !
जरा सम्भलो,
हा　　हाँ
मैं तुम्ह कह रहा हूँ।

देखा !
सामन
एक छोटे मुँह वाला
भयावह अँधेरे स भरा
　　　　एक गड्ढा है !
और तुम
आसमान की ओर रुख किय हुए
आत्मालाप कर रहे हो
और
पीछे चल रह
तुम्हारे साथी
तुम्हें आवाज दे रहे हैं !　　•

भोले लोग

[१]

एक कोलाहल
गुर्राता हुआ
जगल के घन झुरमुटो के बीच
उभरने लगा है ।
लगातार तेज होती
हा हो हा हा ।
कोलाहल का यह
गम्भीर रव
घुमटता हुआ घुआ ।

अलग अलग रगो की
टोपिया लगाए हुए
कुछ लूमड
दुम दबाए दुबक्त हुए
लुक्त छिपत वन्हवास
मुट्ठिया मे—
थलिया मीच हुए
जगल के चोर रास्तो से
उच्चको की तरह भाग रहे है ।

मैं दूरबीन स
देख रहा हूँ—
उन उच्चको के चेहर
खतरे की आवाज स—
पीले और स्याह पडते हुए ।

[२]

जगल के भोले लोग
पुराने ढर्रे से

लकड़िया बीनते थे
फल-वृक्ष सींचते थे
पुष्प पौधे संवारते थे
हहहहाती धान की
क्यारियों को
खून-पसीने से पालते थे !

चेहरों पर मुस्कानें चिपकाकर
टोपियां लगाकर
लगातार
लूमड़नुमा लोग आते गए
अपने अपने छद्म
भुनाते गए
और
फल फूल धान
टोकरियों में बोरों में
भर कर ले जाते गए
और बदले में
भेजते गए
भोले लोगों के पास
पकेटों में बंद—छल !

भोले लोग लगातार
अपने को ठगाते गए !

अति का अंत
विस्फोट में होता है
आदमी के भोलेपन की भी
अपनी एक सीमा है !

लगातार चट्टानें तोड़ने पर भी
जीवन के इस कुएं में
क्यों नहीं आता
सुख का पानी ?

रात दिन खेतो मे, कारखानो मे—
खून पसीना सीचने
के बाद भी,
रात दिन बोरा मे
धान भरने के बाद भी
क्यो रह जाती है
हमारी ग्रांतें भूखी ?

जगल के बीचोबीच
रहन के बावजूद
जलान या बचाव के लिय
एक लकडी भी हमार हाथ क्या नही ग्राती ?
ऐसा क्यो लगता है हमे
कि
हमारे क्लेज म जैस
लहू की एक बूद भी नही है ?

ये सब सवाल ग्रब
जगल के
साफ दिल, भोने लागो के
दिल म—
शूल की तरह
चुभने लग हैं
क्यो ? क्यो ?? क्यो ???
करते हुए
ग्रब य भाले लोग
गुस्स स भरने लग है
ग्रौर
हर ग्र घरे कोने म
तीलिया ग्रौर मशालें
जलाने लग है ।

[मूल राजस्थानी]

अंधेरों के खिलाफ

बहुत चाह थी मेरी कबसे, हटा दूं अंधेरे
पर मुझको ही खा रहे—अंधेरों के घेरे।

किस किस को पूछूं, किस किस को समझाऊँ
इन दुष्ट अँधेरों की गलियां कितनी तक गिनवाऊँ

कैसे मैं बतलाऊँ—खा गये मगरमच्छ
कितनी सोन मछरियां के—अनगिन डेरे।

भौंरों ने आकर मुझको कानों में बतलाया—
अनगिन कलियां सूख गईं अँधियारे ने इतना तड़पाया

वे बाट जोहते रहे—झरने के शीतल जल की
पर प्याले में भर कर कोई लावा ले आया।

बहुत बनाये ये मैंने—सपनों के बहुरंगी घर
उलझ उन्हीं में फड़फड़ रहे—पंख मेरे।

बहारों ने आकर मुझसे—चुपके से कह डाला
कुछ सांप हो गये बगिया में सब फूलों को डस डाला

उजड़ी उजड़ी लगती है—सारी बगिया मुझको
बुझती—बुझती लगती है—सारी अगिया मुझको।

चिनगी चिनगी शामिल कर मैं आग जलाऊँगा फिर से
पौधे पौधे को रोप रोप कर बाग लगाऊँगा फिर से।

किरणों की रेखाओं के मैं—बुन दूंगा घेरे
जहां जहां हैं इन जहरीले सांपों के डेरे।

कुछ भी हो पर चाह रहेगी हटा दूं अँधेरे
देखूं कितना मिटते मुझको अंधेरों के घेरे।। •

गीत

गलियें गूंगी, सडकें बहरी
चौराहे अधापन पाले,
सब अपने घेरा म सिमटे
बात करें ता किससे कैसे ?

सब चहरे डूबे डूबे स
सब आंखें है खाली-खाली
स्वप्न उलझते इक दूजे म
साय भी तो सोयें कस ?

अथ तरते ऊपर-ऊपर
शब्द हुए बेअरथ एकदम
रान की तो रस्म बन गई
रोयें भी तो रोयें कैसे ?

बादल बेवम प्यास रोयें
खेत भूख से वदम ढोयें
कस्तूरी को हिरन मागत
समझायें तो किसको कसे ?

मुस्कानें आसू सजोय
खुशिया अ दर दर्द उगाये
मले फूट फूट कर रोते
ढाढस भी बधवायें कसे ?

सपन मुरदे, साधें लगडी
पथ-दशक अधियारा उगले
आपस मे ही अथ उलझते
कोई समझे भी तो कसे ?
काट—फूल सरीखे दिखते
बरफ सरीखा लहू होगया
हर क्षण शक्ल बदलते चेहरे
कोई पहचान तो कसे ?

•

[मूल राजस्थानी]

दो गजले

(१)

सनाटा चौतरफ बिखरा पडा है
जरूर कुछ हादसा हुआ होगा

उमस है, घुटन है अजब कपकपी है
जरूर कुछ न कुछ दबा हुआ होगा

बादलो का यह देखकर हगामा
सूरज कही न कही छुपा हुआ होगा,

अधेरे के मलबे का इतना बडा ढेर
उजाला कही न कही खो गया होगा

ढूढते ढूढते सुख को हम हार गये
जरूर उसको कुछ हो गया होगा

ठोकरें इतनी लगादी हैं सबने मिलकर
अब तो उनका नशा हवा हो गया होगा।

(२)

चुपचाप गम मे खा रहे ह लोग
बीमार कूली हो रहे है लोग,

तरस कर वो उजाले को रात भर
सुबह थक कर—सो रहे है लाग

बहुत दौडे पर न पानी मिल मका
प्यास से पथरा रहे है लोग,

अपनी कब्रें आप ही खुद खोद कर
मरन स कतरा रहे है लोग।

खोद कर बजर जमी का रात दिन
सुख के सपने बो रहे हैं लोग

क्या बला है? दुख कटता ही नही
खुद कट क टुकडे हो रहे है लोग।

गरीब आ

गरीब आ　　गरीब आ　　।
करीब आ　　करीब आ　　।
किसान आ　　मजूर आ　　।

देख तेर खून से बन रही है कोठिया
देख तरे हाथ से छिन रही है रोटिया
देख तरी मेहनत पे बढत पेट सेठ के
दग्ध कब से लुट रहे है—धान तेर खत के ।
देख तो दिया जला
इस अधेर की बला
गरीब आ　　गरीब आ ।

अपनी मुट्ठिया स तोड गिर रही दीवार अब
इस अधेरे को दिखा रोशनी की धार अब
आस पास से जुटा थोडी सी चिनगारिया
खोल अपने सब दु खो के कारणो की बारिया ।
ले उठा जला मशाल
आग कटको प डाल,
गरीब आ　　गरीब आ　　।
करीब आ　　करीब आ ।
किसान आ　　मजूर आ　　।　　•